Journal Homepage: www.ijarpr.com ISSN: 3049-0103 (Online)

International Journal of Advance Research Publication and Reviews

Vol 03, Issue 8, pp 573-577, August, 2026

ब्राह्मण ग्रंथों का स्वरूप, विषय-वस्तु एवं वैदिक साहित्य में उनका महत्त्व

डॉ. अमित कुमार पाण्डेय [1], डॉ. शशांक शर्मा [2]

[1] संस्कृत विभाग, पंडित सुन्दरलाल शर्मा (मुक्त), विश्वविद्यालय छतीसगढ़, बिलासपुर, भारत

2भौतिक शास्त्र विभाग, पंडित सुन्दरलाल शर्मा (मुक्त), विश्वविद्यालय छतीसगढ़, बिलासपुर, भारत

*Email: shashanksharma1729@gmail.com

सार **(ABSTRACT)**

प्रस्तुत शोध में वैदिक साहित्य के महत्वपूर्ण अंग ब्राह्मण ग्रंथों के स्वरूप, विषय वस्तु एवं महत्त्व का अध्ययन किया गया है। ब्राह्मण ग्रंथ वेदमंत्रों की-व्याख्या तथा यज्ञीय कर्मकाण्ड की विधियों का विस्तृत निरूपण करते हैं। इनका निर्माण वैदिक काल के मध्य चरण में हुआ, जब यज्ञ धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक जीवन का प्रमुख आधार था। ऋग्वेद के ऐतरेय एवं कौषीतकि, यजुर्वेद के शतपथ एवं तैत्तिरीय, सामवेद के पंचविंश तथा अथर्ववेद के गोपथ ब्राह्मण प्रमुख हैं। विषयवस्तु की दृष्टि से इनमें विधि-, अर्थवाद, उपनिषद् और आख्यान भाग मिलते हैं। ऐतरेय ब्राह्मण में यज्ञविधियों-, ऋत्विजों के कर्तव्यों तथा शुनःशेप जैसे आख्यानों का वर्णन मिलता है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि ब्राह्मण ग्रंथ केवल कर्मकाण्डीय ग्रंथ नहीं, बल्कि तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक और दार्शनिक जीवन के महत्वपूर्ण स्रोत हैं। ये वैदिक साहित्य में मंत्र और दर्शन के बीच सेतु का कार्य करते हैं। ब्राह्मण ग्रंथ तत्कालीन धार्मिक चेतना, सामाजिक संरचना एवं सांस्कृतिक मूल्यों को समझने के लिए महत्वपूर्ण हैं।

प्रमुख शब्द (Keywords): यज्ञ, कर्मकाण्ड, वेदमंत्र, अर्थवाद, आख्यान आदि।

प्रस्तावना (Introduction)

ब्राह्मण का सामान्य अर्थ यज्ञ की व्याख्या से संबंधित है। ब्राह्मण ग्रंथों का प्रधान विषय यज्ञों का प्रतिपादन एवं उनकी विधियों की व्याख्या करना है। ये वेदमंत्रों के अर्थ और उनके प्रयोग को स्पष्ट करते हैं। इनका निर्माण वैदिक काल के मध्य चरण में हुआ। उस समय यज्ञ धार्मिक, सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन का महत्वपूर्ण आधार था। इसलिए कहा भी गया है –"ब्रह्मणां वेदवाक्यानां व्याख्यानरूपा ग्रन्थाः ब्राह्मणानि।" अर्थात् वे ग्रंथ जो वेदमंत्रों की व्याख्या करते हैं, ब्राह्मण कहलाते हैं। यह परिभाषा स्पष्ट करती है कि ब्राह्मण ग्रंथ केवल अनुष्ठानों का वर्णन नहीं करते, बल्कि वे मंत्रों के पीछे छिपे अर्थ और उद्देश्य को भी उद्घाटित करते हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से ब्राह्मण ग्रंथों का निर्माण वैदिक काल के मध्य चरण में हुआ, जब यज्ञीय परंपराएँ अपने उत्कर्ष पर थीं। इस समय समाज में धार्मिक अनुष्ठानों का विशेष महत्व था और यज्ञ को न केवल आध्यात्मिक उन्नति का साधन माना जाता था, बल्कि सामाजिक और राजनीतिक प्रतिष्ठा का भी आधार समझा जाता था। इस प्रकार ब्राह्मण ग्रंथ उस युग की धार्मिक चेतना, सामाजिक संरचना और सांस्कृतिक मूल्यों का सजीव चित्र प्रस्तुत करते हैं।

ब्राह्मण ग्रंथ की परिभाषा एवं स्वरूप

वेद के मंत्र भाग के अतिरिक्त वेद के जिस भाग में कर्मकाण्ड का प्रतिपादन किया गया है, उसे ब्राह्मण कहा गया है। ब्राह्मण ग्रंथों में यज्ञों के लिए वेदमंत्रों के प्रयोग के नियम एवं उनकी विस्तृत व्याख्या मिलती है। इनमें परंपरागत कथाओं एवं आख्यानों का भी समावेश है। जैमिनि, सायण, आपस्तम्ब, पतञ्जलि तथा शबरस्वामी आदि ने ब्राह्मण ग्रंथों के स्वरूप एवं विषय पर विचार किया है। शबरस्वामी के अनुसार हेतु, निर्वचन, निन्दा, प्रशंसा, संशय, विधि, परक्रिया, पुराकल्प, व्यवधारण, कल्पना और उपमान आदि ब्राह्मण ग्रंथों के विषय हैं। शतपथब्राह्मण यज्ञ को ही श्रेष्ठकर्म मानता है-'यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म' । अतः यज्ञ-प्रतिपादक ग्रन्थ होने के कारण इन्हें ब्राह्मण कहा गया। वी०एस० आप्टे ने अपने संस्कृत अंग्रेजी कोश में ब्राह्मण शब्द की रचनापरक व्याख्या में कहा है- That portion of the Vedas which states rules for the employment of the hy,nns at the various sacrifices, their origin and detailed explanation with sometimes lengthy illustrations in shape of legends and stories. अर्थात् वेदों का वह भाग, जो विविध वैदिक यज्ञों के लिए वेद-मन्त्रों के प्रयोग के नियमों, उनकी उत्पत्ति एवं विवरणपूर्ण व्यवस्था करता है और जिसमें समय-समय पर विस्तृत दृष्टान्तों के रूप में परम्परागत कथाओं व कहानियों का समावेश करता है। आचार्य जैमिनि ने- 'शेषे ब्राह्मणशब्दः' से मन्त्र भाग के अतिरिक्त वेद- भाग को ब्राह्मण कहा है। आचार्य सायण भी इसी लक्षण को स्वीकार करते हैं। आप- स्तम्ब सूत्र - ३५ में ब्राह्मण का लक्षण 'कर्मचोदना ब्राह्मणानि' किया गया है, जिसमें वेदविहित कर्मकाण्ड का प्रतिपादन किया गया हो उसे ब्राह्मण कहते हैं। निरुतालोचना के 'कोउसी वेद' के उत्तर में स्वामी दयानन्द ने ऋग्वेदभाष्यभूमिका में कहा है- ब्राह्मणानां नामास्ति' । पतञ्जलि ने अपने महाभाष्य ५-१-१ में ब्रह्म और ब्राह्मण शब्दों को समानार्थी माना है - समानार्थावेतौ ब्रह्मन् शब्दो ब्राह्मणशब्दश्च' । शवरस्वामी ने ब्राह्मण ग्रन्थों के प्रतिपाद्य विषय का विवरण देते हुए शाबरभाष्य २-१-८ में कहा है-

हेतुर्निर्वचनं निन्दा प्रशंसा संशयो विधिः ।

परक्रिया पुराकल्पो व्यवधारण कल्पना ।

उपमानं दशैते तु विषया ब्राह्मणस्य च ।।

ब्राह्मण ग्रंथों का वर्गीकरण

ब्राह्मण ग्रंथों का वर्गीकरण वेदों के आधार पर किया जाता है—

- ऋग्वेद — ऐतरेय ब्राह्मण एवं कौषीतकि ब्राह्मण।
- यजुर्वेद — शतपथ ब्राह्मण एवं तैत्तिरीय ब्राह्मण।
- सामवेद — पंचविंश ब्राह्मण।
- अथर्ववेद — गोपथ ब्राह्मण।

प्रत्येक ब्राह्मण ग्रंथ अपने संबंधित वेद की विशेषताओं के अनुसार यज्ञीय विधानों एवं दार्शनिक संकेतों का निरूपण करता है। ब्राह्मण ग्रंथों का वर्गीकरण वेदों के अनुसार किया जाता है। ऋग्वेद से संबंधित ऐतरेय और कौषीतकि ब्राह्मण, यजुर्वेद से संबंधित शतपथ और तैत्तिरीय ब्राह्मण, सामवेद के पंचविंश ब्राह्मण तथा अथर्ववेद के गोपथ ब्राह्मण इस परंपरा के प्रमुख ग्रंथ हैं। प्रत्येक ब्राह्मण ग्रंथ अपने-अपने वेद की विशेषताओं के अनुरूप यज्ञीय विधानों और दार्शनिक संकेतों का निरूपण करता है।

ब्राह्मण ग्रंथों की विषयवस्तु-: विषय वस्तु की दृष्टि से ब्राह्मण-ग्रन्थों को चार भागों में बाँटा जा सकता है-विधि भाग, अर्थवाद भाग, उपनिषद्भाग तथा आख्यान भाग-।

- विधि भाग :विधि भाग के अन्तर्गत यज्ञ की प्रक्रियाओं यज्ञ की प्रक्रियाओं एवं विधानों का प्रतिपादन एवम विभिन्न यज्ञीय कर्मों की रूपरेखा का विधान किया जाता है।
- अर्थवाद भाग :अर्थवाद में यज्ञ की प्रक्रियाओं एवं प्रार्थनाओं का, इस प्रकार व्याख्याएँ की जाती हैं कि उनसे यज्ञ विधियों के समर्थन के लिए विभिन्न कथाओं- एवं व्याख्याओं का प्रयोगका समर्थन हो सके। यह तत्कालीन इतिहास, आख्यान एवं पुराण परंपरा के अध्ययन में सहायक है। जैमिनि ने अर्थवाद को तीन भागों में बाँटा है-गुणवाद, अनुवाद तथा भूतार्थवाद ।
- उपनिषद् भाग :तीसरे उपनिषद् भाग में ब्रह्मतत्त्व (ब्रह्मसत्वं जगन्मिथ्या) कथाओं, प्रश्नों के माध्यम ब्रह्मतत्त्व का उद्घाटन किया गया है।
- आख्यान भाग :चौथे आख्यान भाग में प्राचीन राजाओं एवं ऋषियों का वंश-कीर्तन किया गया है।

ऋग्वेद के ब्राह्मण ग्रंथ: ऋग्वेद से संबंधित दो प्रमुख ब्राह्मण ग्रंथ हैं— ऐतरेय ब्राह्मण, कौषीतकि ब्राह्मण। इन दोनों में यज्ञीय परंपरा, उसकी विधियों तथा उनसे संबंधित आख्यानों का विस्तृत विवेचन प्राप्त होता है।

ऐतरेय ब्राह्मण का परिचय

ऐतरेय ब्राह्मण शाकल शाखा के ऋग्वेदियों से संबंधित माना जाता है। इसमें कुल 40 अध्याय हैं। यह ब्राह्मण विषयवस्तु की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इन अध्यायों को ५-५ के क्रम से कुल ८ पञ्चिकाओं में विभक्त किया गया है। इसके रचयिता के रूप में महीदास ऐतरेय का उल्लेख मिलता है। जो इतरा नाम की एक शूद्रा दासी से उत्पन्न हुए थे। इस ग्रन्थ के सप्तम पञ्चिका में वर्णित हरिश्चन्द्रोपाख्यान महीदास की एक अलग कहानी प्रस्तुत करता है ग्रंथ के सातवें पंचिका में हरिश्चन्द्रोपाख्यान एवं शुनःशेप आख्यान का उल्लेख मिलता है। इक्ष्वाकुवंशीय महाराज हरिश्चन्द्र ने सन्तान की कामना से वरुण देव की आराधना की । फलस्वरूप वरुण ने राजा हरिश्चन्द्र को पुत्र की बलि के प्रण पर पुत्र प्राप्ति का वर दिया। राजा को रोहित नामक पुत्र तो उत्पन्न हुआ किन्तु उन्होंने पुत्र-मोहवश रोहित के बलि को टालना चाहा जिसके अपराध में वे रुग्ण हो गये। विवश होकर उन्होंने अजीगर्त के पुत्र शुनःशेष को बलि के लिए क्रय किया। उस यज्ञ में शुनःशेप की वरुण- निरुक्तम् स्तुति से शुनःशेप तथा राजा दोनों मुक्त हुए। इस ग्रन्थ के प्रवक्ता ऐतरेय के नाम से ही इसका नामकरण किया गया है। ऐतरेय ब्राह्मण में कहा गया- 'एतद्धस्म व तद्विद्वानाह महिदास ऐतरेयः' इसका प्रमाण है। ऐतरेय ब्राह्मण की भूमिका में आचार्य सायण ने महिदास के जन्म के सम्बन्ध में एक आख्यायिका लिखा है जिसमें महिदास का जन्म किसी राजा की अनेक रानियों में से एक उतरा नाम की रानी से हुआ था। राजा की यज्ञसभा मे उतरा के दुःख से द्रवित होकर भूमि देवता ने महीदास को ब्राह्मणों के समान प्रतिभा का आशीर्वाद दिया था। इसी देवता के अनुग्रह से महीदास को 'अग्नि देवानामयम' से प्रारम्भ कर ४० अध्यायों वाला यह ग्रन्थ प्रत्यक्ष हुआ। छान्दोग्योपनिषद् ऐतरेय की आयु ११६ वर्ष मानता है- 'सह षोडषं वर्षमजीवत्' ५-१६-७ । ऐतरेय ब्राह्मण के १ से १३ अध्यायों में अग्निष्टोम यज्ञ के होता नामक ऋत्वि का कर्तव्य निर्देश किया गया है। १४वें अध्याय में एक दिन में समाप्त होने वाले सोमयज्ञ तथा उससे सम्बद्ध अन्य वस्तुओं का वर्णन है । १५ से १७वें अध्याय तक उक्थ, षोडश, अतिरात्र आदि का तथा १८वें होता की वाञ्छित विधियों की विवेचना की गयी है। १९ से २० वें अध्याय तक छोटे-छोटे यज्ञों के होताओं का कर्त्तव्य-विवेचन प्रस्तुत है । २५वें अध्याय में यजमान के प्रायचित, अग्निष्टोम यज्ञ के समय ऋत्विकों के कर्तव्यों का विवरण दिया गया है। २६ से ३० अध्यायों तक ग्रावस्तु, सुब्रह्मण्य तथा सोमयज्ञ के पुरोहितों का वर्णन किया गया है। ३१ से ४० अध्यायों में ब्राह्मण तथा क्षत्रियों के पारस्परिक सम्बन्ध तथा क्षत्रियों द्वारा किये जाने वाले यज्ञों का वर्णन किया गया है। इस ब्राह्मण में सोम रस के वर्णन की प्रधानता है। अनुसंधानकृत निष्कर्ष से प्रतीत होता है कि इसके १० अध्याय बाद में जोड़े गये।

ऐतरेय ब्राह्मण की विषयवस्तु-

- प्रथम से तेरहवें अध्याय तक अग्निष्टोम यज्ञ के होता ऋत्विज के कर्तव्यों का निर्देश।
- चौदहवें अध्याय में सोमयज्ञ तथा उससे संबंधित विषयों का वर्णन।
- पंद्रहवें से सत्रहवें अध्याय तक उक्थ, षोडश एवं अतिरात्र आदि का विवेचन।
- अठारहवें अध्याय में होता की विधियों का वर्णन।
- उन्नीसवें एवं बीसवें अध्याय में छोटे यज्ञों के होताओं के कर्तव्यों का विवरण।
- यजमान के प्रायश्चित्त एवं ऋत्विजों के कर्तव्यों का वर्णन।
- छब्बीसवें से तीसवें अध्याय तक विभिन्न पुरोहितों का वर्णन।
- इकतीसवें से चालीसवें अध्याय तक ब्राह्मण-क्षत्रिय संबंध एवं क्षत्रियों के यज्ञों का वर्णन।
- ग्रंथ में सोमरस के वर्णन की प्रधानता है।

कौषीतकि ब्राह्मण का परिचय

इस ब्राह्मण का एक अपर अभिधान सांख्यायन है। इसके - कुल ३० अध्याय हैं। अध्ययन से प्रतीत होता है कि यह ब्राह्मण ऐतरेय के ५ अध्यायों का विकसित रूप है। यह वाष्कल शाखा वाले ऋग्वेदियों का ब्राह्मण माना जाता है। कौषीतकि ब्राह्मण का दूसरा अभिधान सांख्यायन है। इसका संबंध कौषीतक ऋषि के पुत्र कौषीतक से माना गया है। इसमें यज्ञ की श्रेष्ठता एवं शास्त्रीय व्याख्या का विस्तृत प्रतिपादन मिलता है।

शुनःशेप आख्यान: कौषीतकि ब्राह्मण की सातवीं पंचिका में शुनःशेप आख्यान का वर्णन है। इसी ब्राह्मण की ७वीं पञ्चिका में शुनःशेप आख्यान वर्णित है, इसमें राजा हरिश्चन्द्र, वरुण एवं शुनःशेप से संबंधित कथा प्रस्तुत की गई है। जिसमें वरुण देव के वरदान से राजा हरिश्चन्द्र को पुत्र प्राप्त होता है परन्तु पुत्र प्राप्ति के प्रण को तोड़ देने पर वरुण के क्रोध के फलस्वरूप राजा को जलोदर रोग हो जाता है। इस ब्राह्मण में यज्ञ की श्रेष्ठता तथा शास्त्रीय व्याख्या का विस्तृत प्रतिपादन किया गया है। सम्भवतः कुषीतक ऋषि के पुत्र कौषीतक के नाम पर इसका नामकरण किया गया है। यह आख्यान ब्राह्मण ग्रंथों की कथात्मक एवं धार्मिक परंपरा को स्पष्ट करता है। ऐतरेय ब्राह्मण की अपेक्षा इस ब्राह्मण में विषय प्रतिपादन की विलक्षण क्षमता दृष्टिगोचर होती है।

ब्राह्मण ग्रंथों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

ऐतिहासिक दृष्टि से ब्राह्मण ग्रंथों का निर्माण वैदिक काल के मध्य चरण में हुआ। इस काल में यज्ञीय परंपराएँ अपने उत्कर्ष पर थीं। यज्ञ को आध्यात्मिक उन्नति के साथ सामाजिक एवं राजनीतिक प्रतिष्ठा का आधार भी माना जाता था। इन ग्रंथों से तत्कालीन धार्मिक चेतना, सामाजिक संरचना एवं सांस्कृतिक मूल्यों की जानकारी मिलती है। भारतीय ज्ञान परंपरा का मूलाधार वेद हैं, और वेदों के भीतर निहित ज्ञान की अभिव्यक्ति चार प्रमुख रूपों—संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद्—में हुई है। इनमें ब्राह्मण ग्रंथों का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि ये वेदमंत्रों के प्रयोग, उनके तात्पर्य और यज्ञीय क्रियाओं के विस्तृत विधान का निरूपण करते हैं। यदि संहिताएँ वैदिक ज्ञान की काव्यात्मक अभिव्यक्ति हैं, तो ब्राह्मण ग्रंथ उसी ज्ञान की व्याख्यात्मक और क्रियात्मक प्रस्तुति हैं। इस दृष्टि से ब्राह्मण ग्रंथ वैदिक परंपरा के व्यावहारिक पक्ष का प्रतिनिधित्व करते हैं। इस समय समाज में धार्मिक अनुष्ठानों का विशेष महत्व था और यज्ञ को न केवल आध्यात्मिक उन्नति का साधन माना जाता था, बल्कि सामाजिक और राजनीतिक प्रतिष्ठा का भी आधार समझा जाता था। इस प्रकार ब्राह्मण ग्रंथ उस युग की धार्मिक चेतना, सामाजिक संरचना और सांस्कृतिक मूल्यों का सजीव चित्र प्रस्तुत करते हैं।

ब्राह्मण ग्रंथों की भाषा एवं शैली: ब्राह्मण ग्रंथों की प्रमुख विशेषता उनकी गद्यात्मक शैली है। यह संस्कृत गद्य के प्रारंभिक रूप का प्रतिनिधित्व करती है, जिसमें सरलता के साथ-साथ गूढ़ता भी विद्यमान है। इन ग्रंथों में यज्ञ की प्रत्येक विधि का अत्यंत सूक्ष्म विवरण मिलता है। उदाहरणार्थ, शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है—"यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म।" अर्थात् यज्ञ ही सर्वोत्तम कर्म है। इस कथन से स्पष्ट होता है कि ब्राह्मण ग्रंथों में यज्ञ को जीवन का केंद्रबिंदु माना गया है।

यज्ञ का महत्त्व: ब्राह्मण ग्रंथों की विषय-वस्तु का केंद्र यज्ञ है। यज्ञ को केवल धार्मिक अनुष्ठान के रूप में नहीं, बल्कि ब्रह्मांडीय व्यवस्था के संचालन का साधन माना गया है। अग्निहोत्र, सोमयज्ञ, राजसूय और अश्वमेध जैसे यज्ञों का विस्तृत वर्णन इन ग्रंथों में मिलता है। उदाहरण के लिए—"अग्निहोत्रं जुहोति स्वर्गकामः।" अर्थात् जो स्वर्ग की कामना करता है, वह अग्निहोत्र करता है। यह कथन यज्ञ और फल के संबंध को स्पष्ट करता है।

प्रतीकात्मक एवं दार्शनिक पक्ष: ब्राह्मण ग्रंथों का एक महत्वपूर्ण पक्ष उनका यज्ञ के विभिन्न तत्वों में देखा गया प्रतीकवाद है। इनमें यज्ञ के प्रत्येक तत्व का एक गहरा दार्शनिक अर्थ निहित है। अग्नि को ज्ञान और देवत्व का प्रतीक माना गया है, हवि को त्याग का, वेदी को पृथ्वी का और सोम को अमरत्व का प्रतीक माना गया है। इस प्रकार यज्ञ केवल बाह्य क्रिया न होकर आंतरिक साधना का भी प्रतीक बन जाता है।

आख्यान एवं कथाएँ: ब्राह्मण ग्रंथों में अनेक आख्यानों का समावेश है, जो यज्ञीय परंपरा की व्याख्या को रोचक और अर्थपूर्ण बनाते हैं। ऐतरेय ब्राह्मण में वर्णित शुनःशेप की कथा इसका उत्कृष्ट उदाहरण है। यह कथा दर्शाती है कि किस प्रकार मानव बलि जैसी प्रथाओं का स्थान प्रतीकात्मक यज्ञ ने ले लिया और धर्म का स्वरूप अधिक मानवीय एवं नैतिक बना।

दार्शनिक पक्ष: दार्शनिक दृष्टि से ब्राह्मण ग्रंथों में कर्मवाद की प्रधानता दिखाई देती है, परंतु साथ ही इनमें ज्ञान की ओर अग्रसर होने की प्रवृत्ति भी दिखाई देती है। उदाहरणार्थ—"प्रजापतिः वै इदं सर्वं असृजत। "यह कथन सृष्टि के मूल कारण की खोज की ओर संकेत करता है। इसी प्रकार ब्राह्मण ग्रंथों में यज्ञ को ब्रह्मांडीय व्यवस्था, अर्थात् ऋत, के साथ जोड़ा गया है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि यज्ञ केवल व्यक्तिगत कर्म नहीं, बल्कि सार्वभौमिक संतुलन का साधन है। सामाजिक दृष्टि से ब्राह्मण ग्रंथों में वर्ण व्यवस्था का उल्लेख मिलता है, जो उस समय की सामाजिक संरचना को दर्शाता है।

सामाजिक एवं राजनीतिक पक्ष: ब्राह्मण ग्रंथ तत्कालीन सामाजिक संरचना की जानकारी देते हैं। वर्णव्यवस्था एवं विभिन्न सामाजिक- वर्गों की भूमिकाओं का उल्लेख मिलता है। यज्ञीय अनुष्ठानों में स्त्रियों की सहभागिता का भी उल्लेख मिलता है। राजसूय एवं अश्वमेध जैसे यज्ञ राजसत्ता एवं राजनीतिक प्रतिष्ठा से संबंधित थे। "ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्..."यह कथन समाज के विभिन्न वर्गों की उत्पत्ति और उनकी भूमिकाओं का संकेत देता है। साथ ही, इन ग्रंथों में स्त्रियों की सीमित किन्तु महत्वपूर्ण भूमिका का भी उल्लेख मिलता है, विशेषतः यज्ञीय अनुष्ठानों में उनकी सहभागिता के संदर्भ में। राजनीतिक दृष्टि से भी ब्राह्मण ग्रंथ महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि इनमें वर्णित राजसूय और अश्वमेध जैसे यज्ञ राजसत्ता और साम्राज्य विस्तार के प्रतीक थे। इस प्रकार ये ग्रंथ केवल धार्मिक ही नहीं, बल्कि राजनीतिक और सामाजिक इतिहास के भी महत्वपूर्ण स्रोत हैं।

वैदिक साहित्य में ब्राह्मण ग्रंथों का स्थान: वैदिक साहित्य की प्रमुख धाराएँ संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक एवं उपनिषद् हैं। ब्राह्मण ग्रंथ संहिता के मंत्रात्मक ज्ञान की व्याख्यात्मक एवं क्रियात्मक प्रस्तुति करते हैं। ब्राह्मण ग्रंथों से आरण्यक एवं उपनिषद् साहित्य के विकास की दिशा स्पष्ट होती है। ब्राह्मण ग्रंथों से ही आरण्यक और उपनिषदों का विकास हुआ। जहाँ ब्राह्मण ग्रंथ कर्मकाण्ड पर बल देते हैं, वहीं आरण्यक ध्यान और प्रतीकवाद की ओर उन्मुख होते हैं, और उपनिषद् ज्ञान और ब्रह्मविद्या की पराकाष्ठा को प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार ब्राह्मण ग्रंथ वैदिक साहित्य के विकास की मध्यवर्ती कड़ी हैं।

आलोचनात्मक अध्ययन

आलोचनात्मक दृष्टि से देखा जाए तो ब्राह्मण ग्रंथों की सबसे बड़ी विशेषता उनका विस्तृत और व्यवस्थित यज्ञ-विधान है, जो धार्मिक जीवन को संरचित करता है इनमें धार्मिक जीवन को व्यवस्थित करने का प्रयास दिखाई देता है। परंतु इसी के साथ उनकी सबसे बड़ी सीमा उनकी अत्यधिक कर्मकाण्डीयता है, जो कभी-कभी जटिल और बोझिल प्रतीत होती है। फिर भी, यह स्वीकार करना होगा कि इन ग्रंथों ने भारतीय संस्कृति, दर्शन और समाज को गहराई से प्रभावित किया है। आधुनिक संदर्भ में भी ब्राह्मण ग्रंथों का महत्व बना हुआ है। वे भारतीय सांस्कृतिक विरासत के महत्वपूर्ण अंग हैं और दार्शनिक अध्ययन के लिए आधार प्रदान करते हैं। इनके माध्यम से हम प्राचीन भारतीय समाज की संरचना, धार्मिक आस्थाओं और दार्शनिक चिंतन को समझ सकते हैं। अंततः यह कहा जा सकता है कि ब्राह्मण ग्रंथ वैदिक साहित्य की एक अनिवार्य कड़ी हैं, जो मंत्र और दर्शन के बीच सेतु का कार्य करते हैं। इनमें निहित प्रतीकवाद और दार्शनिक संकेत आगे चलकर उपनिषदों में विकसित होकर भारतीय दर्शन की उच्चतम अभिव्यक्ति बनते हैं। इस प्रकार ब्राह्मण ग्रंथ न केवल अतीत की धरोहर हैं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के लिए भी ज्ञान का महत्वपूर्ण स्रोत हैं।

निष्कर्ष (**Conclusion)**

ब्राह्मण ग्रंथ वैदिक साहित्य की एक महत्वपूर्ण कड़ी हैं, जो संहिताओं के मंत्रों को व्यावहारिक रूप देते हैं। ये वेदमंत्र और दर्शन के बीच सेतु का कार्य करते हैं। । इनका मुख्य विषय वेदमंत्रों की व्याख्या तथा यज्ञीय कर्मकाण्ड की विधियों का प्रतिपादन है। इन ग्रंथों में यज्ञ की प्रक्रियाओं के साथ उनके उद्देश्य, प्रतीकात्मक अर्थ, आख्यान तथा दार्शनिक संकेत भी प्राप्त होते हैं। इनमें यज्ञीय कर्मकाण्ड के साथ प्रतीकात्मक एवं दार्शनिक चिंतन भी मिलता है। इन ग्रंथों के बिना वैदिक साहित्य की पूर्णता संभव नहीं है। ऐतरेय एवं कौषीतकि ब्राह्मण ऋग्वैदिक परंपरा के अध्ययन के लिए विशेष महत्त्व रखते हैं। ऐतरेय ब्राह्मण में यज्ञ-विधियों, ऋत्विजों के कर्तव्यों, सोमयज्ञ तथा ब्राह्मण-क्षत्रिय संबंधों का वर्णन मिलता है। कौषीतकि ब्राह्मण में भी यज्ञ की श्रेष्ठता और उसकी शास्त्रीय व्याख्या का विस्तृत प्रतिपादन किया गया है। इस प्रकार ब्राह्मण ग्रंथ धार्मिक विषयों के साथ तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक जीवन को समझने के महत्वपूर्ण स्रोत हैं। इनके माध्यम से प्राचीन भारतीय समाज की संरचना एवं धार्मिक आस्थाओं को समझा जा सकता है। भारतीय दार्शनिक चिंतन के अध्ययन में इनका विशेष महत्त्व है।

संदर्भ (**References)**

- शतपथब्राह्मणम् — यजुर्वेदीय ब्राह्मणग्रन्थ।
- ऐतरेयब्राह्मणम् — ऋग्वेदीय शाकलशाखासम्बद्ध ब्राह्मणग्रन्थ।
- तैत्तिरीयब्राह्मणम् — कृष्णयजुर्वेदीय ब्राह्मणग्रन्थ।
- कौषीतकिब्राह्मणम् — ऋग्वेदीय ब्राह्मणग्रन्थ, सांख्यायन नाम से भी प्रसिद्ध।
- जैमिनिः — मीमांसासूत्रम् — ब्राह्मणग्रन्थों के स्वरूप एवं अर्थवाद के सन्दर्भ में।
- सायणाचार्यः — वेदभाष्यम् — वैदिक मन्त्रों एवं ब्राह्मणग्रन्थों की व्याख्या के सन्दर्भ में।
- आपस्तम्बः — आपस्तम्बसूत्रम् — 'कर्मचोदना ब्राह्मणानि' इति ब्राह्मणलक्षणस्य सन्दर्भे।
- पतञ्जलिः — महाभाष्यम् — ब्रह्मन् एवं ब्राह्मण शब्दों के सन्दर्भ में।
- शबरस्वामी — शाबरभाष्यम् — ब्राह्मणग्रन्थाणां विषयवस्तुविवेचनस्य सन्दर्भे।

- ऋग्वेदः — ऐतरेय एवं कौषीतकि ब्राह्मण के संदर्भ में।
- यजुर्वेदः — शतपथ एवं तैत्तिरीय ब्राह्मण के संदर्भ में।
- सामवेदः — पंचविंश ब्राह्मण के संदर्भ में।
- अथर्ववेदः — गोपथ ब्राह्मण के संदर्भ में।
- राधाकृष्णन, एस. – Indian Philosophy.
- मैक्स मूलर – Sacred Books of the East.
- हाजरा, आर .सी.– Studies in the Brahmanas.